अनन्त शक्ति का पुञ्ज

नमोकार महामंत्र

उपाचार्य देवेन्द्र मुनि

श्री नमस्कार महामंत्र

नमो अरिहंताणं,

नमो सिध्दाणं,

नमो आयरियाणं,

नमो उवज्झायाणं,

नमो लोए सव्व साहूणं

एसो पंचनमोक्कारो, सव्वपावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलम्॥

अनन्त शक्ति का पुञ्ज
नमोकार महामन्त्र

उपाचार्य श्री देवेन्द्रमुनि

श्री तारक गुरु जैन ग्रन्थालय
शास्त्री सर्कल,
उदयपुर-३१३००१

❑ **अर्थ सौजन्य :**

L. Suganchand Jain
Advocate
104, Govindappa Naicken Street
Madras-600001. Ph.: 569729, 569469

❑ **मुद्रक :**

संजय सुराना के लिए
कामधेनु प्रिंटर्स एंड पब्लिसर्स
अवागढ़ हाउस, आगरा-२८२००२

❑ वि. सं. २०४७, चैत्र, महावीर जयन्ती
ईस्वी सन् १९९० अप्रैल

❑ **मूल्य :**

लागत मात्र दो रुपया पचास पैसा

प्राथमिक

मंत्र—मन की शक्ति को जगाने का साधन है । महामंत्र आत्म-शक्तियों को जागृत करता है । नमोकार महामंत्र एक ऐसा ही साधन है, जिसका प्रत्येक वर्ण, अक्षर, पद, विशिष्ट शक्तियों का पुंज है । विधिपूर्वक इसकी साधना, आराधना करने से अनेक प्रकार की मानसिक तथा आध्यात्मिक शक्तियाँ जागृत होती हैं । मानव स्वयं शक्तिमान बन जाता है ।

नमोकार महामंत्र का स्मरण लाखों जैन करते हैं, किन्तु इस महामंत्र के स्वरूप, साधना और आराधना की प्रक्रिया से बहुत कम लोग परिचित हैं । मैंने संक्षेप में इस विषय पर शास्त्रीय तथा वैज्ञानिक दृष्टि से

प्रकाश डालने का प्रयास किया है । इस महामंत्र के स्मरण से मन पर, शरीर पर अनेक चमत्कारी प्रभाव होते देखे गये हैं । संकट भी टलते हैं । सिद्धि भी मिलती है । आरोग्य भी मिलता है और आत्मबल भी जागता है । आशा है, पाठक इस पुस्तक से अनेक प्रकार की उपयोगी जानकारी प्राप्त कर लाभान्वित होंगे ।

—उपाचार्य देवेन्द्र मुनि

(५)

अनन्त शक्ति का पुञ्ज :
नमोकार महामंत्र

संस्कृत साहित्य में एक सूक्ति है— अमंत्रमक्षरं नास्ति—वर्णमाला का कोई भी अक्षर अमंत्र नहीं है, वर्णमाला के सभी अक्षर मंत्र हैं ।

लेकिन जरा सोचिए, वे अक्षर मंत्र कब बनते हैं ? जब इन पर मनन किया जाय— 'मननात् मंत्रः' मनन करने से ही अक्षर में वह विशेषता समुत्पन्न होती है कि साधारण सा लगने वाला अक्षर अचिन्त्य शक्ति से परिपूर्ण मंत्र बन जाता है । और साधक को इष्ट प्राप्ति कें निकट पहुँचा देता है ।

यद्यपि मनन करने की शक्ति का केन्द्र 'मन' तो संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय पशु-पक्षियों को भी प्राप्त है, और सामान्यतया सभी मनुष्यों को भी प्राप्त है—मानसिक क्षमता

इन सभी प्राणियों में होती है लेकिन इस क्षमता को योग्यता बना देने और उसे अभीष्ट, संकल्प्य और अचिन्त्य शक्तिशाली ऊर्जा में परिणत कर देने की शक्ति किसी-किसी मानव में ही परिलक्षित होती है । ऐसे ही विरले, दृढ़ संकल्पी मानव साधक होते हैं—मंत्र-साधक ।

मंत्र क्या है ? अक्षरों, स्वरों और व्यंजनों तथा मातृका वर्णों का संयोजन ही तो है । लेकिन इस संयोजन में शब्द विस्फोट, शक्ति का ज्ञान, कुशलता, साधना का अनुभव, योग्यता और सूक्ष्म दृष्टि की आवश्यकता होती है ।

इसीलिये कहा गया है—योजकस्तत्र दुर्लभः । इन अक्षरों, वर्णों में मंत्रशक्ति तो है किन्तु उनका समुचित संयोजन करने वाला व्यक्ति दुर्लभ होता है । यही कारण है कि भारतीय साहित्य में मंत्र-द्रष्टा ऋषियों का

अत्यधिक आदर के साथ स्मरण करके उन्हें सम्मानपूर्ण स्थान दिया गया है ।

वर्ण-संयोजन : मंत्र का शरीर

प्रत्येक वर्ण की एक ध्वनि होती है, एक संकेत होता है । उन ध्वनियों और संकेतों के उचित समायोजन से मंत्र की शब्द-रचना अथवा उसके शरीर का निर्माण होता है, वह आकार ग्रहण करता है । मंत्र साधना के समय साधक इन शब्दों का उच्चारण करता है ।

उच्चारण के तीन मुख्य केन्द्र हैं— नाभि-स्थान, हृदयस्थान और कंठस्थान । मंत्रशास्त्र, स्वरशास्त्र और ध्वनिविज्ञान की तो मान्यता है कि स्वर सर्वप्रथम नाभिस्थान में उत्पन्न होता है और वहाँ से हृदय-स्थान, कंठस्थान में होता हुआ, स्वरयंत्रों—कंठ, तालु, जिह्वामूल के सहयोग से उच्चरित

होता है और फिर श्रवणगोचर बनता है ।

श्रवणगोचर शब्द भी कुछ इतने सूक्ष्म होते हैं जिन्हें उच्चारणकर्त्ता स्वयं ही सुन पाता है, दूसरे नहीं । कुछ शब्द ऐसे होते हैं जिन्हें दूसरे भी सुन सकते हैं ।

नाभि से उत्पन्न स्वर की कंठ, तालु, जिह्वामूल तक की यात्रा, इन क्षेत्रों में प्रकंपन उत्पन्न करती है और ये प्रकंपन कई हजार प्रति सैकिण्ड की संख्या में होते हैं । स्वरध्वनि की गहराई के साथ-साथ प्रकंपनों की संख्या भी बढ़ती जाती है, और यदि ये स्वयं श्रव्य की सीमा तक ही रहें तो इन प्रकम्पनों से शरीर में ऊर्जा का स्फोट होता है, जो अभीष्ट फल प्राप्ति में शक्तिशाली माध्यम के रूप में कार्यकर होता है । इसीलिए ग्रन्थों में मौनजप, मानसजप या उपांशुजप का अधिक फल बताया है, इससे इष्ट सिद्धि शीघ्र होती है ।

सत्य यह है कि यह संसार जिसमें हम रहते हैं, प्रकम्पनों से भरा है । कहीं ध्वनि प्रकम्पन तो कहीं वर्ण प्रकम्पन । इनमें भी ध्वनि प्रकम्पन, अधिक और तीव्र वेग वाले हैं । शोर (noise) का शोर सर्वत्र व्यापक है। ये प्रकम्पन जब अपनी चरम सीमा पर पहुँचते हैं तो इसका वेग बहुत बढ़ जाता है । वैज्ञानिकों की भाषा में ध्वनि प्रकम्पन किरणें १ करोड़ मील प्रति सैकिण्ड के वेग से गति कर सकती हैं । इस स्थिति में इनसे प्रकाश की किरणें निकलने लगती हैं । तभी तो मंत्र-साधक को जब वह मंत्र की सिद्धि के समीप पहुँचता है तो प्रकाश दिखाई देने लगता है । उसका स्वयं का अन्तर् प्रकाश से ज्योतिर्मय हो जाता है । यह प्रकाश बाहरी नहीं होता, स्वयं की अन्तर् ऊर्जा से ही निकलता है ।

लेकिन यह सब होता तभी है जब मंत्र

का वर्ण-संयोजन समुचित हो और साधक एकाग्रतापूर्वक, असीम निष्ठा और लगन के साथ स्वरों के उचित आरोह-अवरोह को ध्यान में रखकर इस मंत्र का दृढ़ विश्वास और श्रद्धा के साथ जाप करे।

तभी यह स्थिति प्रत्यक्ष अनुभूत होती है—

मंत्रः परमोश्रेयो मननत्राणेह्यतो नियमात्।

—मंत्र परम कल्याणकारी होता है, उसके मनन से—जप से निश्चित ही त्राण अथवा रक्षा होती है, इष्ट फल की प्राप्ति होती है। इसीलिए कहा गया है—

जपात् सिद्धिः जपात् सिद्धिः जपात् सिद्धिर्न संशयः।

मंत्र जप से अवश्य मंत्र की सिद्धि होती है, इसमें किसी प्रकार का संशय नहीं है।

नमोकार महामंत्र

मंत्र में दो प्रकार की शक्तियाँ होती हैं । एक त्राणशक्ति यानी रक्षा करने की शक्ति, दूसरी सिद्धिशक्ति अर्थात् कार्य को सिद्ध तथा सफल बनाने वाली शक्ति ।

मंत्र की त्राणशक्ति और सिद्धिशक्ति की दृष्टि से नमोकार मंत्र संसार का सर्वश्रेष्ठ मंत्र है । इसमें यह दोनों शक्तियाँ तो हैं ही; इनके अतिरिक्त यह महामन्त्र और भी अनेक रहस्यमय तथा ऊर्जस्वल शक्तियों का भंडार है जो आप से हम से अब तक अज्ञात है । यह कल्पतरु, कामधेनु और चिन्तामणि से भी अधिक प्रभावशाली और फलदायी है ।

नमोकार मंत्र से सिर्फ नैतिक शक्तियाँ ही नहीं, आध्यात्मिक शक्तियाँ भी जागृत होती हैं ।

नमोकार की सार्वभौमता

संसार में जितने भी मंत्र हैं, वे किसी न किसी धर्म-परम्परा या इष्टदेव से संबंधित हैं। गायत्री मंत्र वैदिक परम्परा से निबद्ध है तो 'कलमा' मुस्लिम धर्म परम्परा से। गायत्री मंत्र द्वारा साधक सविता (सूर्य) का आह्वान करता है अपनी बुद्धि को प्रेरित करने के लिए। इसी प्रकार और सभी मंत्र अपनी-अपनी धर्म-परम्परा तथा अपने अभीष्ट देवों से जुड़े हुए हैं।

लेकिन नमोकार मंत्र एक सार्वभौम मंत्र है। यद्यपि इसे जैन परम्परा से निबद्ध मंत्र कहा जाता है किन्तु वास्तव में, इस मंत्र में गुणों की पूजा है। आध्यात्मिक शक्ति संपन्न महापुरुषों का स्मरण, नमन एवं आह्वान है। और इसी कारण यह सार्वभौम मंत्र है, क्योंकि सद् गुणों की पूजा सर्वत्र होती है।

नमोकार मंत्र का स्वरूप : वर्ण संयोजन

अब नमोकार मंत्र का स्वरूप समझें—

नमोकार मंत्र में ५ पद हैं और ३५ अक्षर । नमोकार मंत्र का मूल पाठ इस प्रकार है—

नमो अरिहंताणं	**७ अक्षर**
नमो सिद्धाणं	**५ अक्षर**
नमो आयरियाणं	**७ अक्षर**
नमो उवज्झायाणं	**७ अक्षर**
नमो लोए सव्वसाहूणं	**९ अक्षर**

इसमें चूलिका पद है

'ऐसो पंच णमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ।।"

इन चारों पदों के ३३ अक्षरों को मिलाकर नवकार मंत्र के कुल ६८ (३५+३३) अक्षर माने जाते हैं । किन्तु मूल मंत्र ३५ अक्षरों वाला ही सर्वमान्य है ।

इस ३५ अक्षरों वाले मंत्र में ३४ स्वर और ३० व्यंजन हैं । ३४ स्वर मानने का कारण मंत्रशास्त्र का सिद्धान्त और व्याकरण के नियम हैं । इनके अनुसार नमो अरिहंताणं का 'अ' लुप्त हो जाता है । इस प्रकार इस मंत्र में मंत्रशास्त्र के अनुसार ३४ स्वर और ३० व्यंजन अर्थात् ६४ वर्ण हैं और देवनागरी लिपि के भी ६४ ही वर्ण माने गये हैं । अतः संकेतात्मक रूप से इस मंत्र में समस्त श्रुत ज्ञान अर्थात् वर्ण विज्ञान गर्भित हो जाता है ।

पुनः प्राकृत भाषा में अ, इ, उ ये मूल स्वर तथा ज, झ, ण, त, द, ध, य, र, ल, व, स और ह मूल व्यंजन माने गये हैं । ये सब इस महामंत्र में इस प्रकार संगुम्फित हो गये हैं, कि विशेष प्रभावशाली बन गये हैं ।

वर्ण-संयोजन की वैज्ञानिकता

वर्ण-संयोजन की वैज्ञानिकता वर्णों-अक्षरों-स्वरों के समन्वय में निहित है । यह

संयोजन इस प्रकार का होना चाहिए कि वर्ण समूह (मंत्र के अक्षरों) का जब सूक्ष्म विचारपूर्वक मनन अथवा जाप किया जाय तो एक चमत्कारिक शक्ति उत्पन्न हो जाय; ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार रासायनिक पदार्थों के संयोगों—द्रवों द्वारा धातु पर क्रिया करने से विद्युत धारा प्रवाहमान हो उठती है और वायु से सम्पर्क होने पर अद्‌भुत चमत्कारी ध्वनियाँ वातावरण में गूँजने लगती हैं ।

मंत्र में चमत्कार उत्पन्न होने के आधार हैं—अंतःकरण की शक्ति, साधक की मंत्र और अपने इष्ट देव के प्रति असीम निष्ठा—भक्ति । तथा उच्चारण की शुद्धि व तालबद्धता ।

यद्यपि मंत्रशास्त्र में अनेक प्रकार के मंत्र बताये गये हैं, जैसे—स्तम्भन, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण, विद्वेषण, मारण आदि

किन्तु इनमें पौष्टिक और शान्तिक मंत्र ही सात्विक और श्लाघनीय माने गये हैं । पौष्टिक मंत्र-ध्वनियों से आत्म-शांति तथा भौतिक सम्पदाओं की प्राप्ति होती है, जबकि शान्तिक मंत्रों की ध्वनि तरंगें मानसिक, शारीरिक, दैविक और आनेवाली बाधाओं को उपशांत करके मस्तिष्कीय स्थिरता प्रदान करती हैं । मानसिक शान्ति देती हैं ।

जहाँ तक महामंत्र नवकार के वर्ण-संयोजन का प्रश्न है ; उसे शांतिक और पौष्टिक मंत्रों की श्रेणी में रखा जा सकता है । यह वर्ण-संयोजन इतना श्रेष्ठ है कि आपदाओं का निवारण करके सभी प्रकार के विकारों को उपशांत करता है तथा आत्मिक शांति तो इसका मूल उद्देश्य है ही । साधक को सभी प्रकार का लाभ सहज ही प्राप्त होता है ।

जहाँ तक बीजाक्षरों का संबंध है, इसमें सभी बीजाक्षरों का संयोजन हुआ है । अ, आ, इ, ई आदि महामंत्र में नियोजित हुए सभी वर्ण, इस दृष्टि से बीजाक्षर माने जाते हैं कि इन सबके अपने-अपने प्रभाव हैं ध्वनियाँ हैं, तरंगें हैं, संकेत हैं । जैसे-'अ' वर्ण आत्मा में एकत्व का सूचक और शक्तिवर्द्धक है, साथ ही यह आकर्षण शक्ति—सामीप्यता का उत्पादक भी है । साधारण भाषा में भी किसी प्राणी को अपने समीप बुलाने के लिए 'आ, आ' शब्द का उच्चारण किया जाता है और वह प्राणी आकर्षित होकर समीप आ जाता है । इसी प्रकार 'अ, आ' आदि बीजाक्षरों की ताल, लय, घोष, आदि, जिस प्रकार इस महामंत्र में ये वर्ण संयोजित हैं, उसी के अनुसार जाप करने से अनेक लब्धियाँ (विशिष्ट शक्तियाँ) साधक के पास उसी प्रकार खिंची चली

आती हैं, जैसे चुम्बक की ओर लोहकण ।

उदाहरण के लिए इस महामंत्र के किसी भी एक पद को ले लीजिए । प्रथम पद 'नमो अरिहंताणं' ही लें ।

इस सम्पूर्ण पद का जप/ध्यान जब आज्ञाचक्र (ललाट-भ्रूमध्य) पर किया जाता है तो जैसे-जैसे जप की गहराई बढ़ती है, तन्मयता गहरी होती है; वैसे-वैसे स्वतः मस्तिष्कीय तथा भ्रूमध्य में अवस्थित कोशिका तंत्र में कम्पन होने लगता है और शनैः शनैः उन कम्पनों की गति तीव्र से तीव्रतर होती जाती है, परिणामस्वरूप मानस चक्षुओं के समक्ष श्वेत वर्णीय पटल निर्मित हो जाता है, इस पद के चमकीले अक्षरों सहित ।

श्वेत वर्ण शांति और शुद्धता का प्रतीक है । इससे मन की उज्ज्वलता प्रमाणित होती है । साधक की मनःस्थिति जितनी

शान्त और पवित्र होगी श्वेतवर्णी पटल उतना ही शुद्ध और चमकीला उभरता लगेगा । श्वेतवर्ण इस तथ्य को द्योतित करता है कि साधक की अन्तर्हृदयगत कालिमा धुल गई है अथवा धुल रही है ।

इसी प्रकार के प्रभाव अन्य पदों के जप ध्यान से साधक को प्राप्त होते हैं ।

नमोकार का महामंत्रत्व

जैसा कि उपर्युक्त पंक्तियों में बताया गया है, मंत्र अनेक हैं, अनेक प्रकार के हैं, सभी धर्म परंपराओं के अपने-अपने विशिष्ट और इष्ट मंत्र हैं, जो उन परंपराओं से जुड़े हुए हैं लेकिन सार्वभौम और महामंत्र तो नमोकार ही है । हम इस मंत्र के महामंत्रत्व पर विचार करें ।

मनीषी विद्वानों और मंत्र-वेत्ताओं तथा मंत्र-शास्त्रज्ञों ने महामंत्र की कुछ कसौटियाँ/विशेषताएँ बताई हैं ।

महामंत्र वह कहा जाता है जिसकी साधना से साधक को निम्न विशिष्टताओं की उपलब्धि हो—

(१) आत्मिक—विकार, विसंगतियाँ आदि समाप्त हों ।

(२) मानसिक संकल्प-विकल्पों की उपशान्ति हो ।

(३) आन्तरिक शक्तियाँ ऊर्ध्वगामिनी बनें, ऊर्जस्वल हों ।

(४) आत्मा तथा आत्मिक गुणों का साक्षात्कार हो, गुणों में गुणात्मक वृद्धि हो । आत्म-ज्योति में उत्कर्ष का संचार हो ।

(५) वचन—वाणी में प्रभावोत्पादकता का समावेश हो ।

(६) मानसिक, बौद्धिक ऊर्जा वृद्धिंगत हो, बुद्धि में स्फुरणा हो ।

(७) कषाय—क्रोध, मान, माया, लोभ तथा नोकषाय—वेद (काम) आदि की

भावनाएँ, आवेग-संवेग क्षीण होते चले जायें ।

(८) ज्ञाता-द्रष्टा प्रवृत्ति बन जाय, समता-भाव से साधक ओत-प्रोत हो ।

(९) बाह्यमुखी प्रवृत्तियाँ सीमित होकर साधक की वृत्ति अन्तर्मुखी हो जाय । वह आत्मानन्द का रसास्वादन करे, उसी के सुख में उसकी तन्मयता और तल्लीनता बढ़ती जाय ।

(१०) बाह्य पदार्थों में मूर्च्छाभाव—*आसक्ति* क्षीण हो ।

(११) महामंत्र की एक अन्यतम विशेषता वीर्यवत्ता है । मानव-शरीर के चैतन्य केन्द्रों—चक्रों में प्राणशक्ति सघन रूप में निहित होती है । महामंत्र के जप—ध्यान और साधना से ये चक्रस्थान जागरित हो जाते हैं जिनसे शक्ति का स्रोत फूटने लगता है और साधक को अतिशय आत्मिक वीर्य

तथा उत्साह की अनुभूति होने लगती है ।

(१२) वीर्यशक्ति की अनुभूति संकल्प की दृढ़ता, इच्छाशक्ति की प्रभावोत्पादकता के रूप में प्रस्फुटित होती है ।

(१३) महामंत्र की साधना, आध्यात्मिक दोषों—राग-द्वेष, विषय-कषाय, ईर्ष्या-द्वेष आदि विकारों पर कुठाराघात करके उन्हें क्षीणप्राय करती है । जैसे गर्म लोहे पर पड़ता हथोड़ा उसको दवाता हुआ मन-इच्छित रूप में ढालता है वैसे ही मंत्र का ध्यानरूपी हथोड़ा विकारों को दवाता हुआ उन्हें सात्विक रूप में ढाल देता है । परिणामस्वरूप अनेक प्रकार के मानसिक एवं शारीरिक रोग भी उपशांत हो जाते हैं । साधक को शारीरिक एवं मानसिक स्वस्थता तथा स्फूर्ति की उपलब्धि होती है ।

आज के मनोविज्ञानशास्त्री और चिकित्सा-शास्त्री भी इस तथ्य को स्वीकार

करते हैं कि medicine औषधि द्वारा चिकित्स्य रोगों की उत्पत्ति मानसिक-शारीरिक विकारों के कारण मानव के अन्तरंग में होती है और दिखाई वे बाह्य शरीर में देते हैं । सिर्फ accident के अतिरिक्त अन्य रोगों के विषय में उनका यही मत है ।

कोरिया में जब अमेरिका के सैनिक लड़ रहे थे तो काफी दिन व्यतीत हो गये । उनकी इच्छा अपने परिवारीजनों से मिलने की तीव्र होती चली गई, किन्तु मजबूरी से उन्हें कोरिया में रहना पड़ रहा था । परिणाम यह हुआ कि मन और शरीर परस्पर विपरीत हो गये, द्वैध की स्थिति निर्मित हो गई । मन परिवारीजनों से मिलने को व्याकुल था; किन्तु शरीर को वहाँ रहकर युद्ध करना पड़ रहा था । मनोभावनाओं का प्रभाव इस रूप में आया कि अधिकांश सैनिकों पर लकवा का प्रकोप हो

गया । मजबूरन अमेरिकन सरकार को उन्हें वापिस बुलाना पड़ा । अपने परिवारीजनों से मिलने के बाद उनके शरीर और मन का द्वैध मिट गया और वे बिना किसी विशेष उपचार के ही स्वस्थ हो गये ।

जैन दर्शन की भी मान्यता ऐसी ही है । रोग आदि की उत्पत्ति का कारण वेदनीय (असातावेदनीय) कर्म माना गया है । सीधी और सरल शब्दावली में रोग की उत्पत्ति कार्मण शरीर में होती है, उससे तैजस शरीर प्रभावित होता है और अभिव्यक्ति औदारिक अथवा स्थूल शरीर में होती है, रोग औदारिक शरीर में दिखाई देता है । इस प्रकार रोग आदि का मूल आध्यात्मिक दोष—राग-द्वेष, कषाय आदि कार्मण शरीर (कर्म) होता है ।

महामंत्र नवकार की साधना से सर्वप्रथम कार्मण शरीर विशुद्ध होता है, अशुभ कर्मों

(असातावेदनीय आदि) की निर्जरा होती है । जिससे तेजस् शरीर की शुद्धि होती है । अतः साधक को औदारिक शरीर में रोग आदि की बाधा नहीं सताती अथवा बहुत कम सताती है, रोग आदि व्याधि निष्प्रभावी हो जाते हैं ।

(१४) महामंत्र की साधना से इच्छाओं का विसर्जन तथा उन्मूलन होता है ।

(१५) सुख-दुःख आदि सभी द्वैधभावों के प्रति उसके दृष्टिकोण में परिवर्तन हो जाता है । हर्ष-शोक आदि के भावों में क्षीणता आती है, हर्ष की स्थिति में साधक फूलकर गर्वोन्मत्त नहीं होता, और शोकपूर्ण परिस्थितियों में हताश निराश होकर संतापित नहीं होता । उसमें सहजता आती है । मोह आसक्ति कम होती है और तितिक्षा भाव बढ़ता है ।

(१६) साधक की चैतन्य शक्ति व वीर्यशक्ति का समन्वित विकास होता है ।

इसके परिणाम स्वरूप उसकी आत्म-रमणता में वृत्ति अधिक जमती है, आत्म-सुख की अनिवर्चनीय अनुभूति होती है । वृत्तियों में शोधन से उसके जीवन में श्रेयकारी परिवर्तन होता है ।

ये सभी विशेषताएँ नवकार मंत्र में हैं । और इसकी साधना करने वाले विशिष्ट साधकों मे अनुभव की हैं, व्यक्त भी की हैं । जिसके आधार पर हमने यह संकेत दिये हैं ।

इस महामंत्र की विधिवत् जप-साधना से साधक को इन सभी विशिष्टताओं की अनुभूति एवं उपलब्धि सहज ही होती है । आप भी कर सकते हैं ।

साधना-प्रक्रिया

साधना से पहले साधना के तत्वों को समझें । ये तत्व हैं— (१) श्रद्धा (२) भावना (३) निष्ठा आदि ।

साधना प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण स्थान है— वर्णों, अक्षरों, व्यंजनों के उचित मात्रा में ह्रस्व, लघु, दीर्घ, प्लुत—इन घोष-ध्वनियों के उच्चारण का तथा यह ज्ञान भी अपेक्षित है कि किसी विशिष्ट स्वर आदि के उच्चारण स्थल (केन्द्र) शरीर के किस भाग में अवस्थित हैं। साधक को चाहिए कि उन्हीं स्थानों से स्वर-ध्वनि का प्रारम्भ करे। इसके साथ ही मंत्र के अर्थ का ज्ञान भी होना चाहिए, इससे साधक की निष्ठा में अभीप्सित वृद्धि होती है।

अनेक कथाओं में ऐसा भी पढ़ने को मिलता है और ऐसा प्रत्यक्ष अनुभव भी है कि ऐसे अनपढ़ तथा असभ्य कहे जाने वाले लोगों को जो नवकार मंत्र का अर्थ बिल्कुल भी नहीं जानते थे, सिर्फ उन्होंने मंत्र को रट लिया और श्रद्धा-निष्ठा पूर्वक जप करने से उन्हें चमत्कारी फल की प्राप्ति हुई।

हुण्डिक चोर की कथा प्रसिद्ध ही है। सेठजी ने उसे नमोकार मंत्र सिखाया, लेकिन पूरा मंत्र तो दूर पहरेदारों के पीछा किया जाने से भयभीत वह नमो अरिहंताणं भी न याद कर सका और 'ताणं ताणं ताणं, सेठ वचन परमाणं' गहरी श्रद्धा-निष्ठा-पूर्वक इतना बोलने मात्र से चमत्कार हो गया।

यद्यपि यह चमत्कार श्रद्धा और निष्ठा तथा अडिग विश्वास का फल था; किन्तु इससे शब्दोच्चारण और अर्थ ज्ञान का महत्व कम नहीं हो जाता। यदि 'ताणं' शब्द के शब्दार्थ पर विचार करें तो ताण का अर्थ रक्षक अथवा शरणदायी होता है। इस संदर्भ में णमोकार मंत्र को अनजाने ही सही हृदय की गहराइयों से उसने शरणभूत माना। श्रद्धा के साथ यदि शब्दोच्चारण और मंत्र के पदों, शब्दों, अर्थ का ज्ञान भी हो तो साधक की ध्येय पूर्ति शीघ्र होती है

तथा उसे विशिष्टता प्रदान करती है ।

श्रद्धा का अभिप्राय है असीम निष्ठा, दृढ़ विश्वास, जुड़ाव—इष्ट के प्रति और मंत्र के प्रति, घना लगाव । जब श्रद्धा, दृढ़ीभूत विश्वास और लगाव का संबल पाकर घनीभूत हो जाती है तो उसकी ऐसी ही स्थिति होती है, जैसी पानी के जम जाने के बाद, उसकी बर्फ के रूप में परिणति होती है । पानी तरल श्रद्धा है और घनीभूत श्रद्धा है ठोस जमी हुई बर्फ ।

जब श्रद्धा घनीभूत हो जाती है तो बाह्य प्रभाव-आकर्षण-विकर्षण, संशय, विकार आदि उसमें प्रवेश नहीं पा सकते, जबकि तरल श्रद्धा रूपी जल विकारों से—बाह्य प्रभावों से प्रभावित हो जाता है, इसके वर्ण, गंध और रूप प्रभाव में भी विकृति आ जाती है ।

मंत्र-साधना के लिए साधक की श्रद्धा भी

दृढ़ीभूत और घनीभूत होनी चाहिए जो अन्य प्रभावों से अप्रभावित रहे ।

इसके उपरान्त स्थान है भावना का । आगमों में दृढ़चरित्री श्रमणों के लिए एक शब्द आता है-भावितात्मा; ऐसा श्रमण जिसका अन्तर्मन—आत्मा श्रमणाचार, ध्यान, जप, धर्म आदि से भावित हो चुका है-साधना उसकी रग-रग में, मांसपेशियों में, अस्थि और मज्जा में समा गई है, एकाकार हो गई है ।

मंत्र-साधना में भी भावना का यही रूप अपेक्षित है । साधक मंत्र के शब्दों में, उच्चारण में तल्लीन हो जाय, तादात्म्य हो जाय, एकाकार हो जाय, सांस लेते समय और छोड़ते समय प्रत्येक श्वासोच्छ्वास पर मंत्र पद को उच्चारण करता रहे, उसे ही अनुभव करता रहे अर्थात् उसका श्वासोच्छ्वास मंत्र की ध्वनि से गुंजित

होकर 'नाद' जैसा बन जाय । इसे कहा जाता है, मंत्र से भावित होना, मंत्र की भावना से अभिन्न होना ।

जब तक मंत्र और साधक—दो भिन्न विधाएँ रहती हैं तब तक मंत्र साकार नहीं होता, उसका साक्षात्कार नहीं होता और जहाँ भिन्नता मिटी, अभिन्नता की स्थिति आई कि मंत्र साकार हो जाता है । उसका साक्षात्कार हो जाता है । साधक को मंत्र सिद्ध हो जाता है । इसे ही कहा गया है-मंत्र सिद्धि ।

यह मंत्र सिद्धि घनीभूत श्रद्धा और भावना की गहराई की अतिरेकता पर निर्भर है । जितनी गहरी भावना—मंत्र के साथ भावनात्मक एकात्मता होगी, सिद्धि भी उतनी ही उच्च कोटि की साधक को उपलब्ध होगी । साधक को उसमें सुख की अनुभूति होगी । ऐसा आनन्द आयेगा कि

साधक उसमें लवलीन हो जायेगा । और उस आनन्द से पुलकता रहेगा किन्तु शब्दों से बता नहीं सकेगा ।

शब्द पौद्गलिक हैं । पुद्गल हैं—इसलिए इनमें वर्ण भी है, गंध भी है, रस भी है और स्पर्श भी है तथा उनका निश्चित आकार-संस्थान भी है । लेकिन सामान्य स्थिति में अथवा शब्दों के उच्चारण मात्र से न वर्ण सामने आता है, न गंध की और न रस की ही अनुभूति होती है । किन्तु भावना का योग पाते ही वे अजीव वर्ण सजीव से हो उठते हैं, उनमें रूप, रस, वर्ण आदि की अभिव्यक्ति हो जाती है, ये गुण जो छिपे हुए थे, अव्यक्त थे; वे व्यक्त हो जाते हैं, प्रगट हो जाते हैं, ठीक उसी तरह जैसे पारा औषधियों के रस की भावना (वैद्यक ग्रन्थों के अनुसार) का योग पाकर पारद-रसायन बन जाता है—स्वास्थ्य, बल,

वीर्य, ओज-तेजवर्धक रसायन ।

मंत्र के विषय में भी यही तथ्य है । घनीभूत श्रद्धा और भावना की तीव्र धारा का संस्पर्श पाकर मंत्र के अक्षर और संपूर्ण मंत्र सजग, सजीव से हो उठते हैं, और उनमें से अचिन्त्य शक्ति उसी प्रकार प्रस्फुटित हो उठती है जैसे पारे से रसायन । इसे ही कहते हैं मंत्र का देवता जाग्रत होना ।

वैज्ञानिक विधि से परमाणु (जैन दर्शन की मान्यता के अनुसार स्कन्ध) विखंडन होने पर असीम ऊर्जा प्रगट हो जाती है । वैसे ही भावना से मंत्र के शब्द परमाणु (स्कन्ध) विखंडित होकर ऊर्जा के अक्षय स्रोत बन जाते हैं ।

नमोकार महामंत्र का साधक भी मंत्र के सजग और सिद्ध होने पर अपनी अन्तरात्मा

में ऐसी ही शक्ति की अनुभूति करता है । किन्तु वह शक्ति उष्ण न होकर शीतल होती है, साधक का हृदय—'शीतल चित्त भयो जिम चन्दन'—ऐसी स्थिति पर अवस्थिति कर लेता है । इसीलिए तो नमोकार मंत्र को पौष्टिक और शान्तिक मंत्र बताया गया है ।

प्रक्रिया

अब नमोकार मंत्र के एक-एक पद की साधना प्रक्रिया को समझें—

पहला पद है—

नमो अरिहन्ताणं

शब्दार्थ है—अरिहन्तों को नमस्कार हो ।

इस पद का जप/ध्यान ज्ञानकेन्द्र (आज्ञा-चक्र-भ्रूमध्य-ललाट) पर करना चाहिए । ध्यान—चित्त की वृत्ति ज्ञान केन्द्र पर केन्द्रित हो और मन एकाग्र । इस पद का ध्यान श्वेत वर्ण में किया जाता है । अभिप्राय यह है कि उक्त पद के सातों अक्षरों की चमकीले

सफेद रंग की कल्पना करनी चाहिए । 'पद' जाप के समय साधक श्वेत रंग को कल्पना की आँखों से देखेगा किन्तु धीरे-धीरे वह श्वेतरंग चर्म चक्षुओं में झलकने लग जाता है और साधक को श्वेत चक्र दीखता है ।

दो शब्द हैं—करना और होना । श्वेत-वर्णी अक्षरों का ध्यान करना चाहिए—ऐसा नमस्कार महामत्र माहात्म्य आदि अनेक मंत्र-शास्त्रीय ग्रन्थों में उल्लेख पाया जाता है । यह निर्देश प्रारम्भिक अभ्यासी साधक को दृष्टिगत रखकर किया गया है, ऐसा प्रतीत होता है । जब अभ्यास सुदृढ़ हो जाता है तो ध्यानावस्थित होते ही अक्षर चमकीले श्वेतवर्णी मानस पटल पर दृष्टिगोचर होने लगते हैं । सायास आवश्यक नहीं रहता, अनायास—सहज ही सब कुछ घटित होने लगता है ।

इसका एक कारण और भी है, वह

ह्-वर्णों का संयोजन ।

यद्यपि जैन शास्त्रों में वर्ण यानी रंग ५ प्रकार के माने गये हैं—(१) काला, (२) पीला, (३) नीला (४) लाल और (५) श्वेत । किन्तु आधुनिक विज्ञान ७ रंग मानता है—(१) बैंगनी, (२) गहरा नीला, (३) नीला, (४) हरा, (५) पीला, (६) नारंगी और (७) लाल ।

विज्ञान यह भी मानता है कि किसी एक गोल प्लेट पर इन सातों रंगों के फलक बना दिये जायँ और इस गोल प्लेट को तीव्रगति से घुमा दिया जाय तो ज्यों-ज्यों घूमने का वेग बढ़ेगा, ये सब रंग दृष्टि-पटल से गायब होते जायेंगे और सिर्फ सफेद रंग ही दिखाई देगा । तेज गति से घूमते सप्तवर्णी चक्र पर सिर्फ सफेद रंग ही दिखाई देगा ।

अद्‌भुत साम्यता है—विज्ञानसम्मत रंग भी ७ हैं और 'नमो अरिहंताणं' पद के भी सात वर्ण (अक्षर) हैं । जब साधक इस पद

का ध्यान ज्ञानकेन्द्र पर करता है तब उसके एकाग्रमन से बलशाली बनी ध्यान की तीक्ष्ण धारा से ज्ञानकेन्द्र पर सघन रूप से अवस्थित तेजस् शरीर के परमाणुओं (प्रदेशों) में प्रकम्पन शुरू हो जाता है और चक्राकार अवस्थित परमाणुओं में घूर्णन की स्थिति बनती है। घूर्णन की गति और उसका वेग ज्यों-ज्यों बढ़ता है, श्वेत रंग उभरने लगता है और तीव्रतर तथा तीव्रतम वेग की स्थिति में जब साधक पहुँचता है तब 'नमो अरिहंताणं' के सातों अक्षर अत्यन्त चमकीले श्वेत रंग में दृष्टिपटल पर चमकने लगते हैं।

शास्त्रों में इस पद के ध्यान के चार सोपान बताये गये हैं—(१) अक्षर ध्यान (२) पद का ध्यान (३) पद के अर्थ का ध्यान और (४) अर्हत् स्वरूप का ध्यान।

अभीष्ट सफलता के लिए साधक को इन

चारों सोपानों का क्रमशः ध्यान करके अपने अभ्यास को सुदृढ़ करना चाहिए ।

यह साधना विधि नमोकार मंत्र के अन्य चारों पदों के ध्यान के लिए भी समझ लेनी चाहिए ।

(२) दूसरा पद है—**नमो सिद्धाणं** ।

'नमो सिद्धाणं' पद की साधना दर्शन केन्द्र (सहस्रार चक्र-ब्रह्मरन्ध्र-मस्तिष्क) पर ध्यान को एकाग्र करके रक्त वर्ण में की जाती है । रक्त वर्ण से अभिप्राय है—बाल सूर्य के वर्ण जैसी अरुण आभा ।

इसकी साधना के भी उक्त चार सोपान हैं ।

प्रथम पद का श्वेत वर्ण आत्मिक, मानसिक शुद्धता और स्वच्छता तथा शुभ्रता का प्रतीक है; जबकि इस द्वितीय पद का रक्त वर्ण स्फूर्ति, आत्मजागृति और आत्मिक गुणों के विकास को द्योतित करता है । यह

पद सिद्धिदायक है ।

'नमो सिद्धाणं' पद में 'द्धा' संयुक्ताक्षर होने से यह महाप्राण दीर्घध्वनि वाला वर्ण बन गया है । इसके नाद (दीर्घ उच्चारण) से नाभिकमल, हृदय कमल, कंठ कमल, आज्ञा चक्र और सहस्रार चक्र तक सम्पूर्ण चक्रों में अवस्थित परमाणुओं में प्रकम्पन होता है और सबसे अधिक प्रकम्पन सहस्रार चक्र में होते हैं । सम्भवतः इसीलिए ग्रन्थकारों ने इसका ध्यान सहस्रार चक्र पर करने का निर्देश दिया है ।

(३) तीसरा पद—**'नमो आयरियाणं'** आचार्य से संबधित है । इस पद द्वारा आचार्यों की अर्चना, वन्दना और उनको नमन किया गया है ।

इस पद का ध्यान विशुद्धि केन्द्र (कण्ठ स्थान) पर किया जाता है । साधना के चार सोपान हैं । वर्ण पीला (पीत) है ।

विशुद्धि केन्द्र पर किया गया ध्यान आवेग-संवेगों की विशुद्धि का हेतु बनता है । वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी आवेगों की नियामक थायराइड ग्रन्थि यहाँ पर अवस्थित है । इस ग्रन्थि द्वारा उत्सर्जित हारमोनों से प्राणी के आवेग-संवेग-आवेशों में हानि वृद्धि होती है । यह ग्रन्थि निकाल देने से आवेगों का उद्वेग कम हो जाता है । अतः इस स्थान पर ध्यान करने से साधक के आवेग-संवेग, काम, क्रोध आदि की भावनाओं में क्षीणता आती है, वे उपशमित हो जाते हैं । शल्य चिकित्सक ऑपरेशन द्वारा जिस ग्रन्थि को निकालकर क्रोधी कामी को शान्त बनाता है, ध्यानसाधक मानसिक ध्यान द्वारा ही उस ग्रन्थि को शमित कर शान्ति, समता और निर्भीकता अनुभव कर सकता है ।

आवेग आदि के उपशमन से ज्ञान तन्तुओं

की शक्ति बढ़ जाती है । जो शक्ति आवेगों में व्यर्थ बहती है, उसका संरक्षण होता है, अतः ज्ञान-वृद्धि और धारणा-शक्ति में विकास होता है । इसीलिए पीत वर्ण को ज्ञान-प्राप्ति में सहायक माना गया है । पीला रंग—प्रकाश या ज्ञान का सूचक है । आचार्य ज्ञान-दान करता है ।

नमो उवज्झायाणं पद का ध्यान निरभ्र आकाश जैसे नीले रंग में आनन्द केन्द्र (हृदय चक्र) पर किया जाता है । इस पद की साधना के भी चार सोपान हैं ।

प्रथम सोपान में एक-एक अक्षर का ध्यान, द्वितीय सोपान में पूरे पद का ध्यान, तृतीय सोपान में पद के अर्थ का और चतुर्थ सोपान में उपाध्यायजी के गुणों का ध्यान करने का निर्देश ग्रन्थों में प्राप्त होता है ।

आध्यात्मिक और वैज्ञानिक दृष्टि से नीला रंग शान्ति का प्रतिनिधि माना जाता

है । क्रोध आदि कषायों के उद्वेग को रोकने के लिए नीला रंग उपयोगी माना गया है । जिन व्यक्तियों को उत्तेजना अधिक आती है, छोटी-छोटी बातों पर उत्तेजित हो जाते हैं, मनोचिकित्सक ऐसे लोगों को नीले रंग की वस्तु हमेशा पास में रखने की सलाह देते हैं । योगेश्वर श्री कृष्ण एवं ध्यानयोगीश्वर भगवान पार्श्वनाथ की देह कान्ति नीले रंग की मानी गई है । अतः उनका ध्यान करने से भक्त स्वाभाविक रूप में शान्ति का अनुभव करता है ।

ज्योतिषी भी शनिग्रह की उपशांति के लिए नीलम रत्न को अँगूठी में धारण करने की सलाह देते हैं ।

वास्तविक स्थिति यह है कि शनिग्रह जब अशुभ होता है तब वह जीवन में संघर्ष की स्थिति निर्मित करता है, आजीविका के साधनों में कमी और लाभ को अलाभ में

परिवर्तित कर देता है, परिणाम यह होता है कि मनुष्य चिन्ताग्रस्त हो जाता है, चिन्ताओं के कारण मस्तिष्क में तनाव और तनाव से मन-मस्तिष्क में उत्तेजना चंचलता उभरती है ।

नीला रंग, ज्योतिष के अनुसार नीलम (क्योंकि नीलम का रंग भी नीला होता है) उत्तेजना को शांत करके, मानव के मस्तिष्क को सुस्थिर होने में सहायक बनता है और मनुष्य शांतिपूर्वक सोच-समझ कर कठिन परिस्थितियों को सुलझाने की राह निकाल लेता है ।

उपाध्याय जी का अथवा **नमो उवज्झायाणं** पद का नीले रंग में ध्यान करने से साधक को शांति की अनुभूति होती है ।

नमो लोए सव्वसाहूणं नमोकार महामंत्र का अन्तिम पद है । इसका ध्यान मणिपूर चक्र (नाभिकमल) पर किया जाता है । इसका

ध्यान काले, कस्तूरी जैसे चमकदार काले रंग में करने का विधान है ।

इसके भी ४ सोपान हैं । प्रथम पद के अक्षरों का ध्यान, दूसरा संपूर्ण पद का ध्यान, तीसरा पद के अर्थ का ध्यान और चौथा सोपान है—साधुजी के गुणों का ध्यान । पांचवे पद में प्रयुक्त अक्षर ९ हैं । अंकशास्त्र अथवा संख्याशास्त्र की दृष्टि से ९ की संख्या हीयमान नहीं है, चाहे जिस संख्या से ९ की संख्या को गुणा किया जाय गुणनफल का योग सदा ही ९ रहता है । इसका संकेतात्मक अभिप्राय यह है कि साधुजी के गुण कभी हीयमान नहीं होते अथवा साधु कभी गुणों से हीन नहीं होते । उनके गुण गुणात्मक रूप (Geometrical progression) में बढ़ते हैं, दूसरे शब्दों में निरंतर विकसित होकर उत्कर्ष को प्राप्त होते हैं ।

परम्परा से यह धारणा चली आ रही है

कि काला रंग शुभ नहीं होता; किन्तु यह धारणा पूर्ण सत्य नहीं है । वास्तविकता यह है कि काला रंग अवरोधक और अवशोषक होता है । बाहर के प्रभावों को अन्दर नहीं आने देता और आन्तरिक उपलब्धियों, शक्तियों को बाहर नहीं जाने देता । इसीलिए धूप से बचने के लिए काले रंग का चश्मा लगाया जाता है । छतरी का कपड़ा, धूप से बचने के पर्दों का रंग भी काला रखा जाता है ।

यह भी सत्य है कि काले रंग पर दूसरा कोई रंग नहीं चढ़ता । इसीलिए तो साधु-श्रमण बाह्य भावों से अलिप्त रहते हैं और उपसर्ग-परीषहों में भी अपना समत्व स्थिर रखने में समर्थ होते हैं ।

काला रंग साधु की तितिक्षा में अभिवृद्धि करता है, उसके चारित्र में, साधना में दृढ़ता प्रदान करता है, कष्टसहिष्णु बनाता है ।

इस प्रकार नमोकार महामंत्र की साधना विभिन्न वर्णों (रंगो) के माध्यम से एकनिष्ठा और दृढ़ विश्वास के साथ की जाती है ।

यद्यपि आत्मिक दृष्टि से विचार किया जाय तो आत्मा का कोई वर्ण ही नहीं होता । सिद्ध परमेष्ठी, जो परमशुद्ध, आत्मस्वरूप हैं, वे तो पूर्णतः अवर्ण ही हैं । किन्तु नवकार महामंत्र की साधना में जो रंगों का विधान किया गया है, वह प्रतीकात्मक है ।

अर्हन्त परमेष्ठी का श्वेत वर्ण उनकी निर्मलता का प्रतीक है, आचार्य परमेष्ठी का पीला रंग उनकी ज्ञान गरिमा और आचार की उत्कृष्टता तथा अशबल (निष्कलंक) संयम का प्रतिनिधित्व करता है । उपाध्याय जी का नीला रंग उनकी प्रशांतता, उपशमता का दिग्दर्शन कराता है, जब कि साधुजी का काला वर्ण उनके गुणों के

गुणात्मक विकास का संदर्शन कराता है ।

यदि इन परमेष्ठियों के पदक्रम की दृष्टि से विचार किया जाय तो काले रंग से नीला रंग विशुद्धि का प्रतीक है, नीले की अपेक्षा पीले रंग में विशुद्धि अधिक होती है और श्वेत वर्ण तो सर्वविशुद्ध है ही; ठीक उसी प्रकार जैसे कृष्णलेश्या से नीललेश्या विशुद्ध है और नील की अपेक्षा तेजोलेश्या विशुद्ध तथा शुक्ललेश्या तो विशुद्धतम है ही ।

प्रस्तुत ध्यान साधना के सन्दर्भ में इस वर्ण विशुद्धता का अभिप्राय आत्मा के परिणामों की विशुद्धता है ।

यद्यपि यह सत्य है कि धर्म साधना अथवा धार्मिकता का प्रारम्भ ही तेजोलेश्या से होता है; कृष्ण, नील, कापोत ये तीनों अधर्मलेश्याएँ मानी गई हैं । किन्तु नवकार मंत्र साधना में जो साधुजी का काले रंग में और उपाध्यायजी का नीले रंग में ध्यान

करने का निर्देश दिया गया है ; इसका अभिप्राय ऐसा नहीं है कि साधुजी और उपाध्यायजी के आत्म-परिणाम अथवा भावलेश्या कृष्ण अथवा नीललेश्या रूप होते हैं, इनकी भावलेश्या तो निश्चित ही धर्मलेश्या होती हैं ।

यहाँ साधना में जो रंगों का संयोजन किया गया है; उसके दो अभिप्राय हैं— एक, ध्यान को आलम्बन प्रदान करना और दूसरा विभिन्न रंगों का वह प्रभाव जो मन से आत्मा पर पड़ता है ।

साधना की आवश्यक बातें

नमोकार मंत्र की साधना की पूर्वपीठिका के रूप में कुछ सावधानियाँ और विशेष बातें ध्यान में रखनी आवश्यक हैं ।

(१) द्रव्य शुद्धि—शरीर मलिन न हो, साफ हो; इसी प्रकार वस्त्र, आसन, बिछाने का

पाट-पाटला आदि भी स्वच्छ हों, निर्जीव हों, उनमें जीव राशि न हो।

(२) क्षेत्र शुद्धि—वातावरण स्वच्छ और साफ हो, उपासना गृह, स्थानक आदि, निवास स्थान का कोई कक्ष जो पृथक हो, वायु एवं ध्वनि के प्रदूषण से रहित अथवा उद्यान आदि हो। लेकिन वहाँ क्षुद्रजीवों का उपद्रव न हो, अन्यथा डांस मच्छरों आदि की बाधा के कारण, साधना में मन स्थिर नहीं रह सकेगा।

(३) काल शुद्धि—दिन अथवा रात्रि का ऐसा समय चुनना चाहिए, जब कोलाहल न हो अथवा कम से कम हो। काल शुद्धि की दृष्टि से ब्रांह्म मुहूर्त का समय ग्रन्थकारों ने श्रेष्ठ बताया है, इस समय प्रकृति भी शांत रहती है, वायु भी स्वच्छ—ऑक्सीजनयुक्त।

यद्यपि आज का औद्योगिक युग शोर और प्रदूषण का युग है; किन्तु फिर भी प्रातः के

तीनसे पाँच बजे तक के समय में शोर बहुत कम हो जाता है और प्रदूषण का भी अभाव-सा हो जाता है । अतः यही समय साधना के लिए उचित माना गया है ।

(४) **भाव शुद्धि**--इसका अभिप्राय मन की शुद्धि, चित्त में विकारों, चिन्ताओं, आवेगों-संवेगों और बाह्य प्रभावों का अभाव है ।

मंत्र के प्रति असीम निष्ठा, दृढ़ विश्वास और श्रद्धा भी भाव-शुद्धि में परिगणित किये गये हैं । इनका सद्भाव अति आवश्यक है । इनके अभाव में या तो साधना होगी ही नहीं और यदि हुई भी तो उसमें खोखलापन रहेगा, वह दिखावटी हो जायेगी ।

आसन का भी साधना में महत्वपूर्ण स्थान है । साधक अपनी शारीरिक क्षमता और रुचि के अनुसार खड्गासन, सिद्धासन, पद्मासन, अर्द्धपद्मासन, पल्यंकासन, कोई

भी आसन अपना सकता है किन्तु यह आवश्यक है कि उस आसन से वह सुखपूर्वक अधिक से अधिक समय तक स्थिर रह सके।

आसन की अस्थिरता ध्यान में विक्षेप उत्पन्न करती है । अस्थिर आसन से, बार-बार आसन बदलने से, शरीर के हिलने-डुलने से बार-बार ध्यान टूट जाता है, उसकी एकतानता नहीं रहती और एकतानता के अभाव में ध्यान में साधक को जो आनन्द की अनुभूति होनी चाहिए, वह नहीं हो पाती; ध्यान की सम्पूर्ण प्रक्रिया फीकी और नीरस हो जाती है ।

उच्चारण—जपसाधना श्रव्य की जाए अथवा अश्रव्य; किन्तु महामंत्र के अक्षरों, व्यंजनों और स्वरों का शुद्ध रूप में उच्चारण करना आवश्यक है । जिस स्वर व्यंजन पर जितना बल देना आवश्यक है, उतना ही दिया जाय, न कम न अधिक । साथ ही

उच्चारण लय-तालपूर्वक हो, न अतिशीघ्र न अति विलंबित ।

ताल-लयपूर्वक उच्चारण से साधना में रसास्वाद की स्थिति बनती है और साधक *आल्हाद को प्राप्त करता है ।*

'नमो अरिहंताणं' एक पद को लय पूर्वक उच्चारण करने में आप आधा मिनट भी लगा सकते हैं तथा १ सेंकंड में भी बोल सकते हैं । किन्तु जरा अनुभव करके देखें जितना लम्बा ताल लय युक्त उच्चारण होगा उसमें आनन्द उतना ही अधिक आयेगा । आनन्द आयेगा तो एकाग्रता बढ़ेगी । एकाग्रता बढ़ेगी तो निश्चय ही मंत्र में शक्ति जागृत होगी, सिद्धि मिलेगी ।

महामंत्र के पाँचों पदों के उच्चारण के समय के विषय में एक आचार्य का मत है कि नमोकार मंच के पाँचों पदों का जाप ३ श्वासोच्छ्‌वास में कर लेना चाहिए। यह

आचार्य का मत है, कठोर नियम नहीं । यह साधक की क्षमता है कि वह पाँचों पदों का जाप ३ श्वासोच्छ्वास में करे या ५ श्वासोच्छ्वास में । लेकिन इतना आवश्यक है कि एक पद का जाप एक श्वासोच्छ्वास में पूरा हो जाय । पद के बीच में श्वास न टूट जाय । श्वास जितना लम्बा ले सकें उतना ही अच्छा है । दीर्घ श्वास से एकाग्रता, शान्ति और आयु, आरोग्य की वृद्धि होती है ।

दूसरी आवश्यक बात है प्रत्येक श्वास ताल-लयमय हो, सम हो, इनमें समान और एक-सा समय लगे ।

श्वासोच्छ्वास का सम्बन्ध ध्यानावस्था तक रहता है; जबकि ध्यानावस्था में उच्चारण की अवस्थिति नहीं रहती ।

ध्यान के लिए श्वासोच्छ्वास का सम रहना अनिवार्य है । उखड़ी हुई अथवा

तीव्रगति से श्वासोच्छ्‌वास चलता हो, उस समय ध्यान में विक्षेप होता है, मन एकाग्र नहीं हो पाता ।

मन और श्वासोच्छ्‌वास का सीधा सम्बन्ध है । प्राण की गति का प्रभाव मन पर पड़ता है । प्राण (श्वासोच्छ्‌वास) जितना सम होगा, मन भी उतनी शीघ्रता से साम्यावस्था में आ जायेगा और ध्यान की स्थिति मूर्त रूप ग्रहण कर लेगी ।

अतः नवकार मंत्र की ध्यान साधना से पूर्व इन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है । इनसे ध्यान साधना सहज और फलवती बनती है ।

नमोकार मंत्र की साधना का फल

यह तो एक जाना हुआ तथ्य है कि प्राणी की प्रत्येक प्रक्रिया किसी न किसी प्रकार का परिणाम लाती ही है । मंत्र-साधना भी

किसी फल प्राप्ति की इच्छा से की जाती है । शायद ही संसार का कोई प्राणी हो जो बिना किसी कामना के एक कदम भी चले और यहाँ तक कि एक अंगुली भी हिलाए । वीतराग के सिवाय निष्काम साधना कौन कर सकता है । कामना भले ही पवित्र हो या स्वार्थ दूषित–परन्तु कामना सभी संसारी प्राणियों में रहती ही है ।

यद्यपि शास्त्रकारों ने, मन्त्र विशारदों ने और मनीषियों ने काम्य जाप अथवा काम्य साधना को निम्नस्तर का बताया है और निष्काम जप साधना को उच्चस्तरीय घोषित करके गुणगान किये हैं । फिर भी साधकों में अपनी-अपनी रुचि के अनुसार दोनों रूप प्रचलित रहे हैं ।

इसका कारण यह रहा कि अधिकांश मंत्र प्रमुखतया लौकिकता से सम्बद्ध रहे; इनका फल स्वर्ग-प्राप्ति तथा भौतिक सुख-समृद्धि,

ऐश्वर्य-भोग ही इनका उद्देश्य रहा, अलौकिक फल भी बताया गया तो अधिक से अधिक ईश्वर कृपा, ईश्वर सामीप्य ही; किन्तु स्वयं ईश्वरत्व नहीं ।

महामंत्र नवकार ही एक ऐसा मंत्र है जिसका उच्चतर अलौकिक फल ईश्वरत्व की प्राप्ति है और लौकिक फल तो असीम सुख-संपदा आदि हैं ही । लौकिक कामना रहित जप साधना से भौतिक समृद्धि के रूप में जो फल प्राप्त होते हैं, उन्हें आनुषंगिक कहा गया है ।

नवकार मंत्र की साधना के फलों की निष्पत्तियों का सूक्ष्म दिग्दर्शन निम्न शब्दों द्वारा किया जा सकता है ।

इस मंत्र की निष्पत्तियाँ अथवा फल आध्यात्मिक भी हैं, मानसिक भी हैं और शारीरिक भी ।

आध्यात्मिक फल इस प्रकार हैं—

(१) इसकी साधना से भावनाओं की विशुद्धि होती है ।

(२) आत्मिक शांति प्राप्त होती है ।

(३) आध्यात्मिकदोष—क्रोध, मान, माया, लोभ आदि उपशांत होते हैं ।

(४) आत्मा अपनी अनन्त शक्तियों—दर्शन, ज्ञान, वीर्य, सुख आदि से परिचित होता है, इन शक्तियों पर उसका विश्वास दृढ़ होता है ।

(५) असीम सत्ता तथा असीमता से सम्पर्क होता है ।

(६) अनन्त की अनुभूति होती है ।

(७) अहंकार-ममकार का विसर्जन होता है। साधक की अपने और परायेपन की द्वैध भावना क्षीण होती है ।

मानसिक फल इस प्रकार हैं—

(१) संकल्प-विकल्पों की शान्ति ।

(२) बौद्धिक जाड्य की समाप्ति होकर नई स्फुरणाएँ ।

(३) बुद्धि-शक्ति का विकास और उत्कर्ष ।

(४)मानसिक वृत्तियों की ऊर्ध्वमुखता-ऊर्ध्वारोहण ।

(५) इच्छाओं का अभाव ।

अन्य मंत्रों की साधना से मानसिक और हार्दिक इच्छाओं की पूर्ति होती है, जबकि नमोकार मंत्र की साधना से इच्छाओं का अभाव होता है; परिणामस्वरूप स्थायी शांति की उपलब्धि होती है ।

(६) सुख-दुःख की भावना में परिवर्तन होकर साधक में तितिक्षा भाव बढ़ता है ।

(७) मानसिक संक्लेश समाप्तप्राय हो जाते हैं ।

(८) मानसिक स्वस्थता की प्राप्ति होती है।

शारीरिक लाभ भी इस महामंत्र की साधना से अनेक प्रकार के प्राप्त होते हैं। इसका प्रमुख कारण है इसकी वर्ण संयोजना और विभिन्न रंगों में इसकी साधना-प्रक्रिया।

श्वेत वर्ण शुद्धता, शुभ्रता देता है, मन में सात्विक भावों का उद्रेक होता है, परिणामस्वरूप शारीरिक विकार शांत होते हैं। रक्त वर्ण उत्साह देता है, पीतवर्ण ज्ञानवाही तंतुओं को शक्तिशाली बनाता है, नीलवर्ण शान्ति प्रदाता है और श्याम वर्ण शरीर की कष्ट सहन क्षमता में वृद्धि करता है।

वास्तव में ये शारीरिक परिणाम रासायनिक परिवर्तनों और विभिन्न ग्रन्थियों

से निःसृत हारमोनों की क्रियाशीलता से घटित होते हैं । लेकिन इन सबका परिणाम शरीर और उसके विभिन्न अवयव, मांस-पेशियों, शिराओं, धमनियों आदि पर अनुकूल प्रभाव के रूप में दृष्टिगोचर होता है ।

इन सभी शरीर-जैविक और शरीर-विद्युत-चुम्बकीय परिवर्तनों का प्रभाव यह होता है कि शरीर में लचीलापन बना रहता है, बाह्य परिस्थितियों, सरदी-गरमी आदि ऋतुओं की प्रतिकूलता का अल्पतम प्रभाव होता है ।

यही कारण है कि साधक का शरीर विपरीत परिस्थितियों से अनुकूल—समायोजन करके अस्वस्थता की स्थिति नहीं आने देता, अधिकांशतः वह स्वस्थ रहता है ।

ग्रन्थों में नवकार मंत्र की साधना का फल महर्द्धिक देव के रूप में उत्पत्ति बताया है तथा मोक्ष भी ।

चमत्कार

इस मंत्र के अनेक चमत्कारों का वर्णन शास्त्रों में आया है । आधुनिक काल में भी इसके अनेक चमत्कार कई साधकों और यहाँ तक कि सामान्य जप करने वाले लोगों के अनुभव में आये हैं । सर्प, बिच्छू आदि का विष उतर जाना तो साधारण-सी बात है ।

वस्तुतः विषरहित होना, आन्तरिक हारमोनों की प्रक्रिया है । विष प्रभावित व्यक्ति के रक्त में विष प्रवेश करके रक्त की सामान्य प्रक्रिया, प्रवाह में अवरोध उत्पन्न कर देता है और व्यक्ति मूर्च्छित हो जाता

है । तब नमोकार मंत्र का प्रयोगकर्ता नवकार मंत्र का जाप करते हुए उसके शरीर का स्पर्श करता है अथवा फूँकता है, या अभिमंत्रित जल पिलाता हैं, छींटे देता है तब एक प्रकार की विद्युत जिसे मंत्र-शक्ति से उत्पन्न हुई विद्युत कहा जाता है, विष-प्रभावित व्यक्ति के शरीर में प्रवेश करके रक्ताभिसरण क्रिया के अवरोध को समाप्त करके सामान्य बना देती है, वह व्यक्ति सचेतन हो जाता है, चमत्कार सा हो जाता है ।

यदि विष-प्रभावित व्यक्ति मूर्च्छित न हुआ हो, उसकी चेतना जागृत हो तो वह स्वयं भी नमोकार महामंत्र के जाप से ऐसे चमत्कारी परिणाम और भी शीघ्र प्राप्त कर सकता है ।

इसकी जपसाधना से कैंसर और टी. बी. जैसी बीमारियों को उन्मूलन करने में साधक सक्षम हुए हैं ।

उपसंहार

वस्तुतः नमोकार महामंत्र अनेक शक्तियों का भंडार, अचिन्त्य शक्ति संपन्न, अतिशय चमत्कारी महामंत्र है । जैनधर्म की दृष्टि से यह चौदह पूर्वों का सार, ज्ञान और चारित्र का भंडार, पंच परमेष्ठी का वाचक, पापहर्ता और पुण्यभर्ता तथा परमविशुद्धि-कारक है । लौकिक और अलौकिक सभी प्रकार के सुख और समृद्धियों का प्रदाता है । इसके विधिवत् जपसाधक को दैविक, दैहिक, भौतिक ताप एवं बाधाएँ तथा आधि-व्याधियाँ नहीं सतातीं । वह सुख, समृद्धि और समाधि प्राप्त करता है ।

इन्हीं सब विशेषताओं के कारण इसे अपराजित मंत्र कहा गया है। यह सार्वभौम मंत्र है, मंत्राधिराज है, महामंत्र है। समस्त विघ्नों संकटों का विनाश करके अक्षय, अव्याबाध सुख प्राप्ति का हेतु है।

● ●

उपाचार्य श्री देवेन्द्र मुनि

जैन तत्वविद्या के प्रज्ञापुरुष सिद्धहस्त लेखक

जन्म : वि. सं. १९८८, धनतेरस, ७ नवम्बर, १९३१

दीक्षा : ईस्वी सन् १ मार्च १९४१

उपाचार्य पद : १२ मई, १९८७, पूना श्रमण सम्मेलन पर

ध्वनि विज्ञान के अद्भुत प्रयोगों ने आज मंत्र शक्ति की सत्यता सिद्ध कर दी है । ध्वनि के तीव्र आघात से ठोस धातु भी पिघल सकती है, तो मंत्रोच्चारण से अपनी कार्य सिद्धि क्यों नहीं हो सकती ?

नमोकार महामंत्र की असीम अनन्त शक्ति का अनुभव करने के लिए पाँच बातें आवश्यक हैं—दृढ़ श्रद्धा, शुद्ध उच्चारण, मन की एकाग्रता, ध्येय का ज्ञान और निरन्तर नियमित जप!

विश्वास रखिए, नमोकार मंत्र अवश्यमेव आपकी आत्मिक, मानसिक और शारीरिक क्षमता का विकास करेगा, उसे प्रखर बनायेगा, और सिद्धि के द्वार तक पहुँचायेगा.................

—उपाचार्य देवेन्द्र मुनि

प्रकाशकः श्री तारक गुरु जैन ग्रन्थालय.उदयपु